AMOGHVARTA
ISSN : 2583-3189

ग्रामीण महिलाओं में जेंडर असमानता की स्थितिः एक समाजशास्त्रीय अध्ययन

ORIGINAL ARTICLE

Author
डॉ. उमा निवास मिश्र
सहायक प्राध्यापक
समाजशास्त्र विभाग
पी.जी. कॉलेज
गाजीपुर, उत्तरप्रदेश, भारत

शोध सार

भारतीय सामाजिक व्यवस्था में स्त्री और पुरुष दोनों की महत्ता समान रूप से स्पष्ट है। दोनों एक–दूसरे के पूरक हैं और दोनों के सहयोग से ही समाज की निरन्तरता संभव है जिसे प्रकृति ने भी स्वीकृत किया है। समाज में जितनी महत्वपूर्ण भूमिका पुरुष की है, उतनी ही महत्वपूर्ण भूमिका महिला की भी होती है। देश की सामाजिक परिस्थितियों, मान्यताओं और परंपराओं के कारण ग्रामीण महिलाओं के योगदान को न तो पुरुषों के समान महत्व दिया गया और न ही समान अवसर प्रदान किया गया। ऐतिहासिक प्रमाणों से यह बात स्पष्ट है कि जीवन के लिए आवश्यक वस्तुओं के आविष्कार में महिलाओं ने भी महत्वपूर्ण योगदान दिया है। गाँवों में महिलाएं हर क्षेत्र में पुरुषों के साथ बराबरी से कार्य करती है। कृषि के साथ–साथ घर का काम–काज, बच्चों का पालन–पोषण, पशुपालन से सम्बंधित कार्य, घर की साफ–सफाई और सजावट, परिवार के बड़े–बुजुर्ग और जरूरतमन्द सदस्यों की देखभाल का कार्य तथा अन्य अनेक कार्यों को करती है। इसके बावजूद उनके इन कार्यो की अनदेखी की जाती है तथा उनके साथ असमानता का व्यवहार किया जाता है। महिला के प्रति समाज में लिंग के आधार पर भेदभाव को जेंडर असमानता कहा जाता है जिसका कारण जैविक या शारीरिक न होकर सामाजिक–सांस्कृतिक होता है। भारत मूलतः गावों का देश है इसलिए जब ग्रामीण विकास की बात होती है तो यह जेंडर असमानता उसे प्रभावित करती है। भारतीय समाज में प्रचलित पितृसत्तात्मक व्यवस्था इस जेंडर असमानता को सशक्त आधार प्रदान करती है। इस तरह जब महिलाओं को विकास की मुख्य धारा में देखना है, तो उन्हे सशक्त, सजग एवं समान अवसर प्रदान कर जेंडर असमानता को दूर करना होगा। इस दिशा में नगरों में तो परिवर्तन दिखायी देता है परन्तु ग्रामीण महिला ऐसे परिवर्तन को पूरी तरह स्वीकार नहीं कर पायी है। प्रस्तुत शोध–पत्र में ग्रामीण महिलाओं में जेंडर असमानता की स्थिति पर प्रकाश डालने का प्रयास किया गया है।

मुख्य शब्द

पितृसत्तात्मक व्यवस्था, जेंडर, सेक्स परिवर्तन, स्तरीकरण, संस्कृति, समाजीकरण.

प्रस्तावना

किसी भी देश के विकास के लिए यह आवश्यक है कि वहाँ के परिवार एवं समाज शिक्षित, समझदार एवं आत्मनिर्भर हों। परिवार एवं समाज में सभी लोगों को समान अवसर उपलब्ध हों। किसी भी परिवार का विकास तभी सम्भव है जब उस परिवार की महिला को पुरुषों के समान ही अधिकार एवं अवसर प्राप्त हों। शास्त्रों में हमें अनेक ऐसे उदाहरण देखने को मिलते हैं जिनसे स्त्री और पुरुष की समानता का बोध होता है। जैसे प्राचीन भारत में स्त्री

के लिए पतिव्रत धर्म अनिवार्य था, वैसे ही पुरुषों के लिए एक पत्नीव्रत धर्म। स्त्री के सहयोग के बिना पुरुष के कार्य अधूरे और एकांगी थे। अतः उस समय महिलाओं की स्थिति पूजनीय, सुदृढ़ एवं दैवीय शक्ति के रूप में मान्य थी। परिवार और समाज में उन्हें सम्मान प्राप्त था। देश में महिलाओं की पूजा होती थी क्योंकि सफल जीवन के लिए जिन तीन साधनों – विद्या, धन और शक्ति की जरुरत होती है, वे तीनों साधन, स्त्री रूपी देवी–सरस्वती, लक्ष्मी और दुर्गा की कृपा से ही प्राप्त हो सकते थे। प्राचीन युग की स्त्रियाँ जहाँ एक ओर वेद–मंत्रों की रचना व पाठ करती थी तो दूसरी ओर तर्क–वितर्क व शास्त्रार्थ में अपूर्व कला–कौशल का परिचय भी देती थी।

इसाई धर्मग्रन्थ बाईबिल (Bible) के अनुसार, आदि स्त्री (हौवा–Eve) ने आदि मानव (आदम–Adam) को इडेनबाग (Garden of Eden) में आकृष्ट किया और उससे भूल हुई जिसकी ईश्वरीय सजा आज तक सम्पूर्ण स्त्री जाति भोग रही है। वह सजा है– स्त्रियों को प्रजनन करना, घर की देखभाल करने के साथ–साथ पति के अधीन जीवन व्यतीत करना। यही स्थिति कमोवेश मात्रा में तमाम स्त्री जाति की रही है।[1]

दुर्गा सप्तशती में एक आदर्श वाक्य आया हैः

विद्याः समस्तास्तव देवि भेदाः।
स्त्रियः समस्ताः सकला जगत्सु।।

अर्थात् इस सम्पूर्ण जगत में समस्त विधाएँ तथा सभी स्त्रियाँ उस एक परमात्म–शक्ति दुर्गा माँ की ही रूप में है।[2]

या देवि सर्वभूतेषु मातृरुपेण संस्थिता तथा या देवि सर्वभूतेषु श्रद्धारुपेण संस्थिता आदि उक्तियों द्वारा स्त्री को पुरुष से ऊपर रखा गया है। वास्तव में स्त्री की सहभागिता के बिना न तो पुरुष पूर्णता को प्राप्त करता है और न ही किसी उच्च शिखर पर पहुँच सकता है।

समाज की संरचना में महिलाओं की भूमिका केवल प्रजनन तथा बच्चों के पालन पोषण तक ही सीमित नहीं है बल्कि वह वैयक्तिक, सामाजिक, आर्थिक राजनीतिक और सुरक्षात्मक दृष्टिकोणों से भी अत्यन्त महत्वपूर्ण है। आज जीवन के सभी क्षेत्रों में महिलाएँ अपनी उत्कृष्ट भूमिका का निर्वहन कर रही है। एक ओर जहाँ शहरी महिलाएं स्कूलों, कॉलेजों, कार्यालयों और कारखानों आदि में पुरुषों के साथ कंधे से कंधा मिलाकर देश के विकास में संलग्न है वहीं दूसरी ओर ग्रामीण महिलाएं खेतों–खलिहानों, पशुओं की देखभाल, घर के कामों और अन्य विविध क्षेत्रों में रात–दिन काम करके देश के आर्थिक विकास में अपना बहुमूल्य योगदान दे रहीं हैं। इसके बावजूद समाज में महिलाएं पुरुषों से हीन और कमजोर समझी जाती है, विशेषकर ग्रामीण महिलाएं और अधिक उपेक्षित है। देश की कुल आबादी का लगभग 75 प्रतिशत महिलाएं ग्रामीण क्षेत्रों में निवास करती हैं। देश के विकास में ग्रामीण महिलाओं की भागीदारी को आवश्यक व अनिवार्य माना जाना चाहिए, किंतु देश की सामाजिक–आर्थिक परिस्थितियों, मान्यताओं और परम्पराओं के कारण ग्रामीण महिलाओं के योगदान को न तो महत्व दिया गया और न ही अवसर प्रदान किया गया। पुरुष प्रधान समाज में पुरुषों ने महिलाओं को अपना अनुगामी बनाए रखा जिसमें अनेक प्रकार के रुढ़ियों सामाजिक और आर्थिक बन्धनों ने भी अपना महत्वपूर्ण योगदान प्रदान किया। इन सब कारणों से सम्पूर्ण देश तथा विशेष रुप से ग्रामीण क्षेत्रों में आज भी समाज में जेंडर असमानता दिखायी देती है।

आज हम एक तरफ इस बात के लिए प्रयासरत है कि समाज में जेंडर असमानता समाप्त हो, तो दूसरी तरफ हमारी सामाजिक व्यवस्था इसी जेंडर असमानता पर आधारित है जिससे हम स्वयं जुड़े हुए हैं। जेंडर असमानता का तात्पर्य लिंग के आधार पर महिलाओं के साथ भेदभाव से है, जिसमें लोगों के साथ लिंग के आधार पर समान व्यवहार नहीं किया किया जाता है। इनमें से कुछ भेद अपने अनुभव के आधार पर होते हैं जबकि अन्य समाज निर्मित प्रतीत होते हैं। इससे महिलाएं ही सबसे अधिक प्रभावित होती है। जेंडर–असमानता, स्वास्थ्य, शिक्षा और व्यावसायिक जीवन जैसे कई क्षेत्रों में महिलाओं को कमजोर करती हैं। पराम्परागत रूप से समाज में महिलाओं को कमजोर वर्ग के रूप में देखा जाता रहा है। इन्ही सब तथ्यों को ध्यान में रखकर सितम्बर 2015 में संयुक्त राष्ट्र महासभा की उच्च स्तरीय बैठक में एजेंडा 2030 के अंतर्गत 17 सतत् विकास लक्ष्यों को रखा गया, जिसे भारत सहित 193 देशों ने स्वीकार किया। इन लक्ष्यों में सतत् विकास लक्ष्य (SDG) 5 के अंतर्गत लैंगिक समानता के विषय को

भी शामिल किया गया है। स्पष्ट है कि हमारे समाज के विकास के लिए लैंगिक समानता अति आवश्यक है। महिला और पुरुष समाज के मूल आधार है। समाज में लैंगिक असमानता अर्थात् स्त्री और पुरुष के वीच भेद ईश्वर रचित न होकर समाज रचित है जिससे समाज में समानता के स्तर को प्राप्त करने का लक्ष्य बहुत मुश्किल हो जाता है। भारतीय संविधान में बिना किसी भेदभाव के राज्य के सभी नागरिकों को स्वतंत्रता, समानता, न्याय और बंधुत्व की गारंटी दी गयी है, परंतु स्वतंत्रता प्राप्ति के 75 वर्षों के बाद भी महिलाओं का एक बड़ा वर्ग ऐसा है जिनके साथ दूसरे दर्जे के नागरिकों जैसा व्यवहार किया जाता है। हाल ही में 14 जुलाई 2024 को विश्व आर्थिक मंच ने वर्ष 2024 के लिए अपनी वार्षिक वैश्विक लैंगिक अन्तराल सूचकांक या ग्लोबल जेंडर गैप रिपोर्ट का 18वाँ संस्करण जारी किया जिसमें दुनिया भर की 146 देशों की वैश्विक रैंकिंग में भारत दो स्थान नीचे आकर वर्ष 2023 में 127वें स्थान से वर्ष 2024 में 129वें स्थान पर पहुंच गया है। भारत ने देश में लैगिक अन्तराल को 64.1 प्रतिशत कम कर दिया है जो कि मुख्य रूप से शिक्षण प्राप्ति और राजनीतिक सशक्तीकरण मापदंडों में हुई मामूली गिरावट के कारण हुआ, हालांकि आर्थिक भागीदारी तथा अवसर के स्कोर में सुधार हुआ है।[3] इससे साफ तौर पर अंदाजा लगाया जा सकता है कि हमारे देश में लैंगिक भेदभाव की जड़े कितनी मजबूत और गहरी है। लैंगिक असमानता का जन्म समाज और परिवार के मध्य होता है।

उद्देश्य

ग्रामीण महिलाओं में जेंडर असमानता को स्थिति का एक समाजशास्त्रीय अध्ययन।

शोध पद्धति

प्रस्तुत शोध पत्र की पद्धति वर्णनात्मक है जो कि गुणात्मक तथ्यों पर आधारित है। शोध प्रविधि के अन्तर्गत अध्ययन में द्वितीयक स्रोतों से प्राप्त साहित्य का वैज्ञानिक विधियों से अध्ययन द्वारा वैध एवं विश्वसनीय निष्कर्ष प्राप्त कर अध्ययन विषय की अर्थपूर्ण व्याख्या की गयी है।

परिभाषिक शब्दावली

सेक्स (यौन): शिशु के जन्म के समय उसके जननांगों को देखकर उसके सेक्स की पहचान की जाती है कि वह लड़का है या लड़की। सेक्स की पहचान जन्म से जैविक या शारीरिक रूप से होती है। प्रकृति ने दो सेक्स स्त्री व पुरुष की रचना की है, जिन्हें अलग–अलग गुण देकर एक–दूसरे का पूरक बनाया है। ऐन ओकले के अनुसार ''सेक्स का तात्पर्य पुरुषों एवं स्त्रियों का जैविकीय विभाजन है।''[4] अतः स्पष्ट कि है सेक्स जैविकीय, स्थायी, जन्म आधारित, अपरिवर्तनशील तथा प्रकृति की देन है।

जेण्डर (लिंग): जेंडर एक सामाजिक रूप से निर्मित कोटि (कैटेगरी) है। प्रत्येक समाज में स्त्रियों से सम्बंधित स्त्रियोचित गुण व पुरुषों से सम्बंधित पुरुषोचित गुण पाये जाते हैं। इन स्त्रियोचित व पुरुषोचित गुणों का निर्माण उस समाज की संस्कृति के द्वारा किया जाता है। ऐन ओकले के अनुसार 'जेंडर का तात्पर्य स्त्रीत्व एवं पुरुषत्व के रूप में समानान्तर और सामाजिक रूप से असमान विभाजन से है'।[5] इस प्रकार जेण्डर की अवधारणा स्त्रियों और पुरुषों के बीच सामाजिक रूप से निर्मित भिन्नता के विभिन्न पहलुओं पर ध्यान आकृष्ट करती है। अतः स्पष्ट है कि जेण्डर सामाजिक, सांस्कृतिक, परिवर्तनशील तथा मनुष्यों द्वारा निर्मित है।

हमारे समाज में यह धारणा है कि सेक्स व जेण्डर दोनों एक ही है। इसे अलग–अलग करके नहीं देखा जा सकता है बल्कि एक ही अर्थ के पर्यायवाची शब्दों के रुप में इन दोनों शब्दों का उपयोग किया जाता है। वस्तुतः इन दोनों में पर्याप्त अंतर है। प्रकृति स्त्री–पुरुष का निर्माण करती है और समाज उसके अंदर स्त्रीत्व और पुरुषत्व का निर्माण करता है। सेक्स एक जैविकीय कोटि है जबकि जेंडर एक सामाजिक रूप से निर्मित कोटि है। जेण्डर शब्द महिला एवं पुरुष दोनों की सामाजिक–सांस्कृतिक रचना है अर्थात् समाज द्वारा स्त्री एवं पुरुष को किस प्रकार देखा जाता है, उन्हें कैसी भूमिकाएँ, अधिकार एवं संसाधन दिए जाते हैं।

ग्रामीण समाज में जेण्डर आधारित भेदभाव

मानव का आदिम जीवन अत्यन्त सरल था। व्यक्ति घुमन्तु जीवन व्यतीत करता था। व्यक्ति भोजन और अन्य

आवश्यकताओं की पूर्ति जानवरों का शिकार एवं कन्द–मूल फल एकत्रित करके किया करता था। उस समय भोजन की खोज में भटकने के दौरान व्यक्तियों को हिंसक जानवरों से स्वयं और परिवार की सुरक्षा के लिए अनेक समस्याओं का सामना करना पड़ता था। लोग पेड़ों पर और कन्दराओं में अपना जीवन व्यतीत करते थे। स्त्रियों को गर्भावस्था के दौरान और भी समस्याओं का सामना करना पड़ता था इसलिए सम्भवतः स्त्रियों में प्रजनन शक्ति के कारण पुरुषों द्वारा उन्हे बच्चों के पालन–पोषण और घर की देखभाल का काम दिया गया होगा अथवा स्त्रियों और पुरुषों के बीच आपस में एक समझौता हुआ होगा कि बच्चों का पालन–पोषण और घर का कामकाज महिलाओं द्वारा और घर से बाहर भोजन सामग्री एकत्रित करने की जिम्मेदारी पुरुषों की होगी। यह कोई जैविकीय विभाजन न होकर जेण्डर के आधार पर श्रम विभाजन था। जब मानव ने कृषि और पशुपालन के साथ–साथ स्थायी जीवन की शुरुआत की तब तक जेंडर के आधार पर यह श्रम विभाजन और भी सुदृढ़ हो गया। कार्य के आधार पर समाज में उच्चता व निम्नता की मान्यताएं भी बनने लगीं। समाज में कुछ कार्यों को उच्च व कुछ कार्यों को निम्न माना जाने लगा है। कार्य करने वाले को समाज में सम्मान, प्रतिष्ठा, शक्ति निम्न कार्य करने वाले लोगों से अधिक प्राप्त होने लगी। धीरे–धीरे समाज में सम्मान, प्रतिष्ठा, धन, शक्ति और अन्य आधारों पर सम्पूर्ण समाज को कुछ उच्च व निम्न सामाजिक इकाईयों में विभाजित कर दिया गया जिसे सामाजिक स्तरीकरण के नाम से जानते हैं।[6] महिलाओं में प्रजनन शक्ति, सन्तानों के पालन पोषण और घर के अन्दर के कार्यों की संलग्नता के कारण महिलाओं की निर्णय लेने की प्रक्रिया को सीमित कर दिया गया तथा उनकी निर्भरता पुरुषों पर बढ़ने लगी। महिलाओं के नाम को पिता या पति के नाम के साथ जोड़ दिया गया। सम्भवत यहीं से पितृसत्तात्मक समाज व्यवस्था की शुरुआत को माना जा सकता है।

समाज में हर कोई लड़का या लड़की अथवा नर या मादा के रूप में पैदा होता है। हमारे सेक्स की पहचान जननांगों को देखकर की जा सकती है परन्तु प्रत्येक समाज और संस्कृति में लड़के और लड़कियों की अहमियत को निर्धारित करने और उन्हें अलग–अलग भूमिकाएं, उत्तरदायित्व और विशेषताएं प्रदान करने के अपने–अपने तरीके होते है। परिवार में जन्म के समय से ही लड़के और लड़कियों को उनके अलग–अलग रूप में सीखाने और सीखने की सामाजिक और सांस्कृतिक प्रक्रिया शुरु होती है जिसे समाजीकरण या जेंडरीकरण कहा जाता है। प्रत्येक समाज में नर या मादा शिशु को धीरे–धीरे पुरुष या महिला के रूप में उसकी पुरुषोचित या स्त्रियोचित विशेषताओं के साथ विकसित किया जाता है। उनके गुण, व्यवहार के तरीके, भूमिकाएँ, जिम्मेदारियाँ, प्रस्थितियाँ, अधिकार और उम्मीदें भी अलग–अलग होती है।[7] सेक्स की पहचान जन्म से जैविक या शारीरिक रूप से मिलती है जबकि जेंडर की पहचान सामाजिक एवं सांस्कृतिक रूप से तय की जाती है जिसका सम्बन्ध पुरुषोचित–स्त्रियोचित गुणों, व्यवहार के तरीकों एवं भूमिकाओं आदि से है। नारीवादी विद्वान ऐन ओकली का कहना है किः ''जेंडर का सम्बन्ध संस्कृति से है। इसका तात्पर्य उन सामाजिक श्रेणियों से है जिसमें पुरुष और स्त्री पुरुषोचित और स्त्रियोचित रूप ले लेते हैं। लोग नर है या मादा इसको पहचान शारीरिक प्रमाण से किया जा सकता है, लेकिन पुरुषोचित और स्त्रियोचित गुणों को इन तरीकों से नहीं जांचा जा सकता उनके मानदण्ड सामाजिक–सांस्कृतिक होते हैं जो समय और स्थान के साथ बदलते रहते हैं।'' सेक्स की स्थिर सच्चाई को स्वीकार करना पड़ेगा परन्तु साथ ही जेंडर की परिवर्तनशील सच्चाई को भी स्वीकारा जाना चाहिए। इसी सम्बन्ध में कमला भसीन ने लिखा हैः ''जेंडर सामाजिक व सांस्कृतिक विशेषताएं है, प्राकृतिक नहीं।''[8] जेण्डर भेदभाव के तरीके प्रत्येक समाज में अलग–अलग हो सकते है। जेंडर असमानता सभी समाजों में कम या ज्यादा मात्रा में देखने को मिलती है। इस प्रकार जेंडर असमानता के मामले में सभी समाजों में समानता है।

भारत मूलतः गाँवों का देश है। आज भी यहाँ की 68.80 प्रतिशत आबादी गाँवों में निवास करती है।[9] आज भी ग्रामीण समाज की मान्यताएँ हैं कि पुरुष शारीरिक रूप से शक्तिशाली एवं तार्किक होते हैं जबकि महिलाएँ शारीरिक रूप से कमजोर व भावुक होती है। अतः पुरुषों को घर से दूर व कठोर शारीरिक श्रम वाले कार्य तथा महिलाओं को शारीरिक रूप से आसान काम, घर का काम तथा बच्चों के देखभाल व पालन–पोषण का काम करना चाहिए। यह सभी बातें आज भी हमें ग्रामीण समाज में देखने को मिलता है। स्त्री व पुरुष जो भी अपनी सीमाओं का उल्लंघन करता है। समाज में उसे बुरी नजरों से देखा जाता है। इस प्रकार ग्रामीण समाज में जेण्डर आधारित

भेदभाव आज भी स्पष्ट रूप से दिखायी देता है। ग्रामीण महिलाएँ सुबह जल्दी उठकर पशुओं की देखभाल करती है, घर की साफ–सफाई, कण्डे या उपले बनाना, खाना बनाना और परोसना, बर्तन धोना, खेतों में कृषि कार्य में पुरुषों का सहयोग करना, रात का खाना बनाना और परोसना तथा सोने से पहले सास–ससुर की सेवा करना इत्यादि कार्य प्रतिदिन करती है। महिलाओं को परिवार में पुरुषों से पहले बिस्तर से उठ जाना और पुनः अपने कार्यों में संलग्न हो जाना पड़ता है। यदि ग्रामीण महिलाएं किसी सेवा क्षेत्र में है और गाँवों में रहती है तो भी उनसे प्रतिदिन इन सब कार्यों को करने की अपेक्षा की जाती है। अतः स्पष्ट है कि परिवार और समाज में हुए समाजीकरण की प्रक्रिया से ही लड़के व लड़की में भिन्नता के प्रतिमान विकसित होते हैं जिनका पालन वे आगे के जीवन में परम्परा के रूप में करते हैं जिससे समाज में जेंडर असमानता पोषित होता है। यह भेदभाव परिवार में पुत्र प्राप्ति की कामना के साथ ही प्रारम्भ हो जाता है। लड़के–लड़कियों का जन्म, पालन–पोषण, खान–पान, उठने–बैठने, कामकाज व स्वास्थ्य को लेकर किया जाने वाला भेदभाव भावी पीढ़ी में भेदभाव की नींव डालता है। यही भेदभाव महिलाओं के जीवन पर प्रतिकूल प्रभाव डालता है तथा उनके बीच गहरी असमानता को जन्म देता है। यही जेंडर असमानता महिलाओं में हीन भावना तथा कुंठा उत्पन्न करता है और उनकी स्वतंत्रता व समानता को बाधित करता है।

निष्कर्ष

भारतीय संविधान में प्रत्येक भारतीय को मूल अधिकार के रूप में स्वतंत्रता एवं समानता का अधिकार प्राप्त है। लेकिन वास्तविकता यह है कि संसाधनों तक पहुंच एवं उन पर नियंत्रण के मामले में ग्रामीण महिलाओं को आज भी असमानता का सामना करना पड़ता है। ग्रामीण महिलाओं में आज भी स्वास्थ्य, पोषण, लिंग–अनुपात, साक्षरता, दक्षता का स्तर, सेवा तथा व्यवसाय आदि मामलों में भी असमानता दिखायी पड़ती है। समय–समय पर विभिन्न प्रतिवेदनों से यह बात और भी स्पष्ट हो जाती है। ग्रामीण महिलाओं को आज भी उतनी स्वतंत्रता नहीं मिल पायी है जितनी शहरी महिलाओं को। शासन द्वारा बनायी गयी योजनाएं ग्रामीण महिलाओं का विकास करने में तब तक सफल नहीं हो सकती, जब तक इन बाधाओं और अवरोधों को दूर न किया जाय। ऐसी स्थिति में इन योजनाओं का लाभ केवल सीमित महिलाओं तक ही प्राप्त हो सकेगा, जबकि ग्रामीण महिलाएं इनकी पहुँच एवं लाभों से दूर ही रहेंगी।

संदर्भ सूची

1. सिंह, जे.पी. (2016) *आधुनिक भारत में सामाजिक परिर्तन,* पी.एच.आई. लर्निंग प्राइवेट लिमिटेड, देलही–110092, पृ. 274।
2. श्री दुर्गासप्तशती, गीताप्रेस गोरखपुर पृ. 161, 191–192।
3. ग्लोबल जेंडर गैप रिपोर्ट (2024) WEF, 14 जुलाई 2024।
4. ओकले, ऐन (1972) सेक्स जेण्डर एण्ड सोसाइटी, एशगेट पब्लिशिंग लिमिटेड, इंग्लैंड, ISBN - 9781472453532 (hbk).
5. सिंह, अरुण कुमारी (2003) जेण्डर की अवधारणाः एक विश्लेषणात्मक दृष्टिकोण, *रिसर्च लिंक,* वर्ष–2, अंक–8, सितम्बर–नवम्बर, पृ. 50–64।
6. गौड़, वंदना (2009) आधुनिक सामाजिक व्यवस्था में लिंग के आधार पर सामाजिक स्तरीकरण, *समाज कल्याण,* वर्ष–54, अंक–8, मार्च पृ. 10–11।
7. त्रिपाठी, मधुसूदन एवं आदर्श कुमार (2012) *लिंगीय समाजशास्त्र,* ओमेगा पब्लिकेशन, नई दिल्ली।
8. भसीन, कमला (2000) *भला यह जेंडर क्या है?,* जागोरी पब्लिकेशन, 1 जनवरी 2000, नई दिल्ली।
9. भारत की जनगणना रिपोर्ट, 2011।

––==00==––